मानवाधिकार की संकल्पना : समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य में

पूनम दत्ता
वरिष्ठ व्याख्याता, राजनीति विज्ञान,
राजकीय महाविद्यालय, सूरतगढ़, जिला – श्रीगंगानगर (राज.)

डॉ. संजीव कुमार बंसल
वरिष्ठ व्याख्याता, ए.बी.एस.टी. (वाणिज्य)
श्रीमती नर्बदा देवी बिहाणी राजकीय महाविद्यालय, नोहर, जिला – हनुमानगढ़ (राज.)

सारांश

मानवाधिकार के अन्तर्गत मानव के अपने अधिकारों–कर्त्तव्यों तथा उनसे सम्बन्धित स्वतंत्रता का प्रयोग, समाज के अन्य व्यक्तियों के अधिकारों व स्वतंत्रताओं के प्रति स्वीकृत व सम्मान सुनिश्चित किया जाना भी आवश्यक है, जिसका निर्धारण करना कानून का प्रयोजन है। मानवाधिकार का विषय काफी विस्तृत व जटिल है। दलित समुदाय तथा महिला वर्ग के साथ मानवाधिकारों के हनन में मूल रूप से जाति, लिंग, राजनीतिक, आर्थिक विषमताएँ है लेकिन सरकार द्वारा निरन्तर प्रयास जारी है। स्वतंत्रता पश्चात् कई प्रकार के Acts बनें ताकि मानवाधिकार का हनन न हो लेकिन जाति आधारित संरचना ताकतवर संस्था है, जिससे दलितों के मानवाधिकारों का हनन हो रहा है।

आज समूचे क्षेत्र में एक तरफ जातिगत भेदभाव कम नहीं हुए हैं तो दूसरी ओर मानवाधिकारों की संकल्पना में महिलासशक्तिकरण की विचारधारा मजबूत हुई है। ये सही है कि अभी कुछ समाजों में महिलाओं में जागरूकता की कमी है, अधिकारों के प्रति उदासीन है लेकिन फिर भी आज मानवाधिकारों की संकल्पना ने महिलाओं की प्रस्थिति को ऊपर उठाया है।

बीज शब्द–कानून, संकल्पना, मानव, जाति, महिला, लिंगभेद, मानवाधिकार

प्रस्तावना

संसार में ईश्वर की अनुनम कृति मानव है, मानव की उत्पत्ति का इतिहास अति प्राचीन है। इसका विकास विभिन्न चरणों में हुआ, जिसके साथ ही उसे अधिकारों की आवश्यकता अनुभव हुई, इसी आवश्यकता को ही मानवाधिकार कहा जाता है। समाज में प्रत्येक व्यक्ति को सामाजिक सुरक्षा मानवाधिकारों के अन्तर्गत आती है। मानव अधिकार मनुष्य के वे अधिकार हैं जो जन्मतः प्राप्त होते हैं ये मनुष्य की प्रकृति में ही नीहित हैं और किसी रीति–रिवाज, परम्परा, कानून द्वारा देय नहीं है क्योंकि मानवाधिकार पहले है, राज्य व कानून बाद में।

मानवाधिकार का व्यक्ति के व्यक्तित्व विकास एवम् समाजपयोगी कार्यों में महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। अधिकार सामाजिक जीवन की अनिवार्य शर्त हैं, जिसके बिना मानव जीवन की कल्पना ही नहीं की जाा सकती। राज्य द्वारा व्यक्ति के व्यक्तित्व विकास हेतु अनेक सुविधाएं दी जाती है। राज्य के द्वारा व्यक्ति को प्रदान की जाने वाली बाहरी सुविधाएं ही अधिकार कहलाती है। मानवाधिकारों का विचार एवम् नागरिक अधिकार की अपेक्षा मानव अधिकारों का विचार क्षेत्र नागरिक अधिकारों की तुलना में अधिक व्यापक और विस्तृत है। अतः मानवाधिकारों का सीधा सम्बन्ध मानवीय सुखों से हैं और सुख की अवधारणा को तभी से मानना श्रेयस्कर होगा जब से मानव जाति, समाज एवं राज्य का उदय हुआ है। काल–क्रमानुसार मानव सुख का दायरा विस्तृत हुआ और यह समाज, राष्ट्र और अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर पल्लवित हुआ। प्रसिद्ध दार्शनिक ग्रीन ने कहा है कि– "मानवीय चेतना अपने विकास हेतु स्वतंत्रता

चाहती है स्वतंत्रता अधिकारों में नीहित है और अधिकार राज्य की मांग करते हैं अर्थात् अधिकार मानव जीवन की वे परिस्थितियाँ होती हैं जिनके बिना साधारणतया कोई व्यक्ति अपने उच्चतम स्वरूप की प्राप्ति नहीं कर सकता है।" किसी व्यक्ति को किसी वस्तु को प्राप्त करने या किसी कार्य को सम्पादित करने के लिए उपलबध कराई गई कोई कानून संगत अथवा कानून सम्मत सुविधा, दावा या विशेषाधिकार मानवाधिकार हैं। इस प्रकार ऐसे न्यूनतम अधिकार जो प्रत्येक व्यक्ति में लिंग भेद, भाषा भेद और धर्म भेद होते हुए भी, मानव परिवार का सदस्य होने के नाते प्राप्त है और जो व्यक्ति के जीवन, समानता, स्वतंत्रता तथा प्रतिष्ठा से जुड़े हुए है, मानव अधिकार कहे जा सकते हैं। लास्की– "मानवाधिकार सामाजिक जीवन की वे परिस्थितियाँ है जिनके बगैर सामान्यतया कोई भी व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का पूर्ण विकास नहीं कर सकता है।" एम.ए.सईद– "मानव अधिकारों को सम्बन्ध व्यक्ति की गरिमा से है एवं आत्म सम्मान का अभाव जो व्यक्तिगत पहचान को रेखांकित करता है तथा मानव समाज को आगे बढ़ाता है।"

मानवाधिकारों का वर्गीकरण

प्रथम पीढ़ी के अधिकार–

अधिकारों की जो संकल्पना मानवाधिकारों के रूप में विकसित हुई इसमें नागरिक तथा राजनैतिक अधिकारों का स्थान सबसे प्रमुख है इसी कारण नागरिक तथा राजनैतिक अधिकारों को हम परम्परागत अधिकार भी कहते हैं। इस कारण नागरिक तथा राजनीतिक अधिकारों को प्रथम पीढ़ी के मानवाधिकार कहा जाता है।

द्वितीय पीढ़ी के अधिकार–

सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक अधिकारों को द्वितीय पीढ़ी के अधिकारों की श्रेणी का माना जाता है। इन अधिकारों के विकास के कारण पूंजीवादी व्यवस्था की समस्याएं तथा समाजवादी परम्पराएँ, क्रान्तिकारी संघर्ष तथा लोक कल्याण की विचारधारा रही है।

तृतीय पीढ़ी के अधिकार–

तृतीय पीढ़ी के अधिकारों को सामाजिक समरसता अथवा विश्व बन्धुत्व का अधिकार माना जाता है, ये अधिकार हैं–

* आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक आत्मनिर्णय का अधिकार।
* मानवता की संयुक्त विरासत
* आर्थिक तथा सामाजिक विकास का अधिकार

अन्तरराष्ट्रीय अधिकार

* नागरिक तथा राजनैतिक अधिकार
* आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक अधिकार
* नकारात्मक अधिकार
* सकारात्मक अधिकार

मानवाधिकार व्यापक रूप में व्यक्ति के ऐसे अधिकार समझे जा सकते हैं, जो व्यक्ति के गरिमामयी जीवन के लिए आवश्यक हैं तथा व्यक्ति के व्यक्तित्व के पर्याप्त विकास और खुशहाली के लिए अनिवार्य है। मानवाधिकार की सर्वव्यापी व्यवस्था का उद्देश्य सभी समाजों में व्यक्ति के सम्मानपूर्ण जीवन के लिए परिस्थितियों का पुनर्निर्माण और पुनरीक्षण करना है साथ ही समाज में राजनीतिक और आर्थिक उत्पीड़न का अस्तित्व है वहां से मानवीय कष्ट को दूर करना और विश्व के सभी हिस्सों में मानव जीवन को समृद्ध और परिष्कृत करना है। मानवाधिकारों की संख्या में निरन्तर विकास होता रहा है, इसलिए इन अधिकारों का पूर्ण या अन्तिम स्वरूप का निर्धारण नहीं किया जा सकता है।

जीवन का अधिकार–

किसी निर्दोष को शारीरिक रूप से नहीं सताया जा सकता न ही प्राण लिए जा सकते हैं। जीने का अधिकार प्राकृतिक अधिकार है, सुरक्षा को अधिकार नागरिक अधिकार है।

स्वतंत्रता का अधिकार–

लोकतंत्र में यह नागरिक अधिकार है। इसके अन्तर्गत व्यक्ति को विचार व अभिव्यक्ति, धर्म, संघ बनाने, सभा करने तथा स्वतंत्र भ्रमण करने का अधिकार प्राप्त है।

सम्पत्ति का अधिकार–

व्यक्ति द्वारा वैध तरीके से प्राप्त भौतिक वस्तुओं पर उसका अधिकार होगा तथा राज्य द्वारा इसके सम्पत्ति सम्बन्धी अधिकार की रक्षा की जाएगी।

राजनीतिक अधिकार–

एक नागरिक के रूप में व्यक्ति को अपने समुदाय, देश, राष्ट्र के सार्वजनिक जीवन में भाग लेने, मत देने, चुनाव में भाग लेने, राजनीतिक सत्ता पाने का अधिकार है।

उचित विधिक प्रक्रिया का अधिकार–

इसमें विधि के शासन, विधि के समक्ष समता, विधि का समान संरक्षण के अधिकार आते हैं।

सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक अधिकार–

यह अधिकार सामाजिक जागरूकता की देन है। इसमें शिक्षा रोजगार, सामाजिक सुरक्षा, विश्राम एवम् स्वास्थ्य के उपयुक्त स्तर का अधिकार शामिल है।

संयुक्त राष्ट्र संघ की मानवाधिकारों की वैश्विक घोषणा 10 दिसम्बर, 1948 के Article 1&2में मानवाधिकारों को परिभाषित किया गया है– "सभी मनुष्य समान अधिकार और सम्मान लेकर जन्म लेते हैं, और उन्हें वैश्विक घोषणा में वर्णित सभी अधिकार और स्वतंत्रता जाति, लिंग, रंग, भाषा, धर्म, राजनीतिक या अन्य विचारधारा, राष्ट्रीय या सामाजिक मूल सम्पत्ति या अन्य स्थितियों के किसी भेदभाव के बिना स्वतः मिल जाते हैं।" यह मानवाधिकार की व्यापक व्याख्या है, जिसमें उसके जीवन के अधिकारों से जुड़े प्रश्न तो हैं ही, साथ ही उन आवश्यकताओं का उल्लेख भी है, जो उसके विकास के लिए आवश्यक है, जिनमें स्वास्थ्य, शिक्षा और जीवन की मूलभूत आवश्यकताएँ सम्मिलित हैं।

मानवाधिकार के सम्बन्ध में सम्पूर्ण विश्व पर दृष्टिपात इस तथ्य को उजागर करता है कि वर्तमान में मानवाधिकार के प्रर्वतन की दिशा में मानवाधिकारों का हनन एक प्रमुख समस्या है। यह एक ऐतिहासिक तथ्य है कि मानवाधिकार के हनन की प्रतिक्रिया स्वरूप ही समाज में मानवाधिकार संरक्षण की दिशा में चेतना का प्रादुर्भाव हुआ। वर्तमान में मानवाधिकार हनन की विकट समस्या ने ही इसे शोध का विषय बना दिया है। आधुनिक काल में मानवाधिकारों के लिए संघर्ष इंग्लैण्ड में 13वीं शताब्दी से आरम्भ हुआ, 1215 ई. में प्रसिद्ध मैग्नाकारी की घोषणा से ब्रिटिश संसद को राजा पर नियंत्रण का अधिकार मिला। 1688 ई. की गौरवपूर्ण क्रान्ति एवम् 1689 की ब्रिटिश संसद की "अधिकार घोषणा" मानवीय अधिकारों की प्राप्ति के संघर्ष में मील का पत्थर है। इस प्रकार मानवाधिकारों की घोषणा के आधार पर समानता, स्वतंत्रता एवम् बन्धुत्व को कानूनी अधिकारों की मान्यता प्राप्त हुई।

जब मानवाधिकार के संकल्पनात्मक ढांचे की बात की जाती है तो उनमें बहुत से अधिकारों को गिनाया जाता है जो कि मनुष्यों को प्राप्त हैं। स्त्रियों को भी समान रूप से प्राप्त होने चाहिए, क्योंकि वे भी मानव हैं, किन्तु सदियों से स्त्री इन अधिकारों से वंचित रही है। यही कारण है कि उसके लिए मानव द्वारा समानता का अधिकार प्रदान किए जाने के बावजूद भी आज महिलाएं उत्पीड़न का शिकार है। महिलाओं के प्रति अत्याचार एक सार्वभौमिक प्रवृत्ति है जो लगभग समस्त संस्कृतियों, जातियों तथा वर्गों में विद्यमान रही है। सदियों से भारत में पर्दा प्रथा, दहेज प्रथा, सती प्रथा, रूढ़िवादिता समाज का अंग रहा है। महिलाओं के मानवाधिकारों की स्थिति इस मायने में निराशाजनक है कि उनके मूल अधिकारों का भारतीय समाज और राजनीति की कुलपितागत संस्कृति और संस्कृति का उल्लंघन है। महिलाओं के मानवाधिकारों के संदर्भ में कुछ बातें चिन्ता का विषय है जैसे– घरेलू हिंसा, बाल विवाह, बाल यौन व्यवहार, तलाक, कन्या भ्रूण हत्या, बलात्कार, लैंगिक भेदभाव आदि।

दीपा जैन– "परिवार के स्वरूप में ही स्त्री के व्यक्तित्व को समाहित मानने वाली भारतीय पुरुष प्रधान सामाजिक परम्पराओं ने भारतीय स्त्री को स्वव्यक्तित्व के बोध से सदैव विलग रखा। एक तरफ उसे 'देवी' की उपमा दी जाती है, तो दूसरी तरफ उसे मानव होने के अधिकार से भी वंचित कर दिया जाता है, महिलाओं की शोचनीय दशा का मूल कारण उनमें अपने अधिकारों एवम् चेतना का अभाव है।"

भारत में दलित वर्ग भी मानवाधिकारों से वंचित रहा है और इसकी गहराई में जाने पर पता चलता है कि इसके लिए भारतीय सामाजिक संरचना ही जिम्मेदार है। भारतीय सामाजिक संरचना में व्याप्त जाति व्यवस्था मानवाधिकार के विचार या सिद्धान्त को कमजोर करता है। जाति और मानवाधिकार के बीच गहरा सम्बन्ध है और जाति व्यवस्था में सबसे निम्न पायदान पर आने वाले दलित समुदाय आज भी जाति आधारित भेदभाव का सामना कर रहे हैं जबकि भारतीय संविधान कानूनी तौर पर सभी मनुष्यों को समानता की गारंटी देता है। दलितों के साथ होने वाले अधिकतर अत्याचार की जड़ जाति व्यवस्था है और इसी प्रकार के अत्याचारों से सामाजिक विभाजन भी होता है। भारतीय समाज में जाति का आधार जन्म है जिसे परिवर्तित नहीं किया जा सकता, इसीलिए जाति के आधार पर जो सामाजिक विभाजन होता है तो प्रत्येक जाति का अपना–अपना कार्यक्षेत्र निर्धारित हो जाता है। लुईस डयूमो जाति को सोपानक्रम के विचारधारा के रूप में देखते हैं, इसे सामाजिक दूरी के रूप में भी देखते हैं और उनका मानना है कि जातियों के बीच श्रम विभाजन है जो कि पवित्रता और पत्रिता से जुड़ी है। सामाजिक स्तरीकरण में दलित समाज सबसे निचले पायदान पर आता है और हिन्दू सामाजिक व्यवस्था में यह सामाजिक समूह सर्वाधिक रूप से प्रदूषित समुदाय है इसीलिए दलित समुदाय के साथ सर्वाधिाक रूप से मानव अधिकार का उल्लंघन होता है। सामाजिक मानदण्ड दलित समुदाय के अनुकूल न होकर प्रतिकूल है।

जी.एस. धुर्ये ने जाति व्यवस्था की मुख्य विशेषताओं का उल्लेख किया है, जिसमें समाज का खण्डनात्मक विभाजन, स्तरीकरण, खान–पान और सामाजिक व्यवहार पर प्रतिबन्ध, जातियों की धार्मिक निर्योग्यताएँ तथा विशेषाधिकार, व्यवसाय के स्वतंत्र चुनाव का अभाव, अन्तर्जातीय विवाह पर प्रतिबन्ध आदि शामिल है।

भारतीय संविधान की प्रस्तावना में मानवाधिकार के मूलभूत मुद्दे को शामिल किया गया है। प्रस्तावना के उद्देश्य में सभी मनुष्य बराबर है और उसे स्वतंत्रता, समानता और भाई–चारे के साथ जीवन जीने का अधिकार है। इसी प्रस्तावना में सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय भी शामिल है। भारतीय समाज में दलित समुदाय और महिला वर्ग ऐतिहासिक रूप से असमानता और सामाजिक विषमता का शिकार रहा है इसलिए यह प्रस्ताव कई मायनों में जरूरी है।

ये मानवाधिकार न सिर्फ मौलिक अधिकारों में है बल्कि ये राज्य के नीति निर्देशक तत्त्वों में भी देखे जाते हैं। मौलिक अधिकारों को न्यायालय का संरक्षण प्राप्त होने के कारण इन्हें सर्वोच्च स्थान प्राप्त है। भारतीय संविधान का अनुच्छेद 14 विधि के समक्ष समान व्यवहार, अनुच्छेद 15 पिछड़े वर्गों व अनुसूचित जाति और जन जाति समुदाय के लिए सामाजिक व शैक्षणिक उपबन्ध की व्यवस्था, अनुच्छेद 14 एवं 15 में सार रूप में भारतीय संविधान धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर किसी भी प्रकार से शोषण या अन्याय नहीं होगा, शिक्षा, सरकारी नौकरी के अतिरिक्त विधानसभा और लोक सभा में आरक्षण की व्यवस्था भी की गई है। साथ ही अनुच्छेद 17 के अनुसार अस्पृश्यता को समाप्त कर दिया गया है।

दलितों के मानवाधिकार के हनन में मुख्य रूप से जाति व्यवस्था, गरीबी, अशिक्षा, कानून के बारे में जानकारी का अभाव, जनचेतना में कमी आदि जिम्मेदार है साथ ही महिला वर्ग में भी उदासीनता, जागरूकता का अभाव, कार्यों का दबाव, पितृसत्तात्मक मानसिकता, पारिवारिक दबाव आदि ऐसे कारक हैं जिनसे उनके मानवाधिकारों का हनन होता है।

मानवाधिकारों के प्रति भारत भी एक जिम्मेदार राष्ट्र है। राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग का गठन इसी दिशा में बहुत बड़ा कदम है। भारत में राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग का गठन 12 अक्टूबर, 1993 को हुआ था, महिलाओं को सशक्त बनाने, महिलाओं के हितों की देखभाल व उनका संरक्षण करने, महिला भेदभाव मूलक व्यवस्था, स्थिति और प्रावधानों को समाप्त करने हेतु पहल कर उनकी गरिमा व सम्मान सुनिश्चित करने, हर क्षेत्र में उन्हें विकास के समान अवसर दिलाने, महिलाओं पर होने वाले अत्याचारों एवं अपराधों पर त्वरित कार्यवाही करने के लिए महिला आयोग का गठन किया गया।

सुझाव

* महिलाओं के लिए वैधानिक प्रावधानों से सम्बन्धित प्रशिक्षण की व्यवस्था की जाए।
* मौजूदा विधियां और कानूनों का उचित क्रियान्वयन किया जाए।
* पारदर्शी प्रशासनिक तंत्र विकसित किया जाए।
* विश्वविद्यालयों एवम् महाविद्यालयों में ऐसे आधारभूत पाठ्यक्रमों को संचालित किया जाए जो मानवाधिकारों की सम्पूर्ण जानकारी समाहित करते हों।
* महिला उत्पीड़न को रोकने हेतु समाजीकरण की प्रक्रिया में परिवर्तन किया जाए।

निष्कर्ष

समकालीन समाज में जाति आधारित भेदभाव और हिंसा की घटना दलित समुदाय के साथ होती रहती है। दलित सुदाय के व्यक्तियों के गरिमा, सम्मान, सुरक्षा और संरक्षण के प्रति सरकार को अपने दायित्व बहुत ईमानदारी के साथ निभाना चाहिए, जातिगत भेद–भाव को समाप्त करने के साथ–साथ मौलिक अधिकारों पर भी सरकार के अलावा नागरिक समूह, मीडिया और जागरूक नागरिकों को अग्रणी भूमिका निभानी चाहिए।

महिला वर्ग में मानवाधिकारों की संकल्पना देखें तो महिला सशक्तिकरण का रूप दिखायी देता है, जिसके दो महत्त्वपूर्ण आधार है– शिक्षा और आर्थिक स्वतंत्रता। भारतीय समाज में महिलाओं की सहभागिता दिन–प्रतिदिन आर्थिक, सामाजिक व मनोवैज्ञानिक स्तर पर सशक्तिकरण होने से बदलाव आया है। विभिन्न क्षेत्रों में राष्ट्रीय व अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर कौशल विकास योजना के आधार पर महिलाओं की प्रस्थिति व रोजगार को बढ़ावा मिला है।

भारतीय समाज में मानवाधिकारों को संगठित करने के लिए लोगों को अपने अधिकारों के प्रति जागरूक करने के लिए समाज सुधारकों राजा राममोहन राय, दयानन्द सरस्वती आदि कई महान् हस्तियों ने योगदान दिया है, जिसके परिणाम स्वरूप विभिन्न अधिनियम पारित हुए और सामाजिक ढांचे में सुधार परिलक्षित होने लगे।

संदर्भ ग्रन्थ

1. दीपा जैन– महिला एवं महिला पुलिस, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, 2007
2. कमलेश कटारिया– नारी जीवन वैदिक काल से आज तक, मंगलदीप पब्लिकेशन्स, जयपुर, 2003
3. आशा कौशिक– मानवाधिकार और राज्य, बदलते संदर्भ उभरते आयाम, पोइन्टर पब्लिशर्स, जयपुर, 2002
4. चेतन सिंह मेहता– महिला एवं कानून, आशीष पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1996
5. मीनाक्षी निशान्त सिंह – आधुनिकता और महिला उत्पीड़न, ओमेगा पब्लिकेशन्स, दिल्ली, 2008
6. डॉ. प्रज्ञा शर्मा – भारतीय समाज में नारी के बदलते आयाम, अर्जुन पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली, 2010
7. सुभाष कश्यप– हमारा संविधान, नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली।
8. डॉ. सुनील महावर – राज्य एवं महिला मानवाधिकार, पोइन्टर पब्लिशर्स, जयपुर, 2011